॥ॐ॥

॥ॐ श्री परमात्मने नमः ॥

॥श्री गणेशाय नमः॥

वैदिक मन्त्रसुधा

विषय-सूची

ऋग्वेदीय मन्त्रसुधा 3
यजुर्वेदीय मन्त्रसुधा..... 10
सामवेदीय मन्त्रसुधा..... 13
अथर्ववेदीय मन्त्रसुधा ।..... 14
वैदिक दीक्षान्त 19

ऋग्वेदीय मन्त्रसुधा

ॐ वाङ् मे मनसि प्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरावीर्म एधि। वेदस्य म आणीस्थः श्रुतं मे मा प्रहासीः। अनेनाधीते-नाहोरात्रान्संदधाम्यूतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि तन्मामवतु। तद् वक्तारमवतु। अवतु मामवतु वक्तारमवतु वक्तारम् । ॐ शान्तिः! शान्तिः !! शान्तिः !!!

ऋग्वेद, शान्तिपाठ

मेरी वाणी मन में और मन वाणी में प्रतिष्ठित हो । हे ईश्वर! आप मेरे समक्ष प्रकट हों। हे मन और वाणी ! मुझे वेदविषयक ज्ञान दो। मेरा ज्ञान क्षीण नहीं हो। मैं अनवरत अध्ययन में लगा रहूँ। मैं श्रेष्ठ शब्द बोलूंगा, सदा सत्य बोलूंगा, ईश्वर मेरी रक्षा करें। वक्ता की रक्षा करें। मेरे आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक त्रिविध ताप शान्त हों।

जानन्ति वृष्णो अरुषस्य शेवमुत बध्नस्य शासने रणन्ति।
दिवोरुचः सुरुचो रोचमाना इळा येषां गण्या माहिना गीः।।

ऋग्वेद ३।७।५

जिनकी वाणी महिमा के कारण मान्य और प्रशंसनीय है, वे ही सुख की वृष्टि करनेवाले अहिंसा के धन को जानते हैं तथा महत्के शासन में आनन्द प्राप्त करते हैं और दिव्य कान्ति से देदीप्यमान होते हैं।

जातो जायते सुदिनत्वे अह्नां समर्य आ विदथे वर्धमानः।
पुनन्ति धीरा अपसो मनीषा देवया विप्र उदियर्ति वाचम्।।

ऋग्वेद ३।८।५

जिस व्यक्ति ने जन्म लिया है, वह जीवन को सुन्दर बनाने के लिये उत्पन्न हुआ हैं। वह जीवन-संग्राम में लक्ष्य-साधन के हेतु अध्यवसाय करता है। धीर व्यक्ति अपनी मनन शक्ति से कर्मो को पवित्र करते हैं और विप्रजन दिव्य भावना से वाणीका उच्चारण करते हैं।

स हि सत्यो यं पूर्वे चिद् देवासश्चिद् यमीधिरे।
होतारं मन्द्रजिह्वमित्सु दीतिभिर्विभावसुम्॥

ऋग्वेद ५।२५।२

सत्य वही है जो उज्ज्वल है, वाणी को प्रसन्न करता है और जिसे पूर्वकाल में हुए विद्वान् उज्ज्वल प्रकाश से प्रकाशित करते हैं।

सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते।
तयोर्यत् सत्यं यतरदृजीयस्तदित् सोमोऽवति हन्त्यासत् ॥

ऋग्वेद ७।१०४।१२

उत्तम ज्ञान के अनुसन्धान की इच्छा करने वाले व्यक्ति के सामने सत्य और असत्य दोनों प्रकार के वचन परस्पर स्पर्धा करते हुए उपस्थित होते हैं। उनमें से जो सत्य है, वह अधिक सरल है। शान्ति को कामना करने वाला व्यक्ति उसे चुन लेता है और असत्य का परित्याग करता है।

सा मा सत्योक्तिः परि पातु विश्वतो द्यावा च यत्र ततनन्नहानि च।
विश्वमन्यन्नि विशते यदेजति विश्वा विश्वाहोदेति सूर्यः ॥

ऋग्वेद १०।३७।२

वह सत्य-कथन सब ओर से मेरी रक्षा करे, जिसके द्वारा दिन और रात्रि का सभी दिशा में विस्तार होता हैं तथा यह विश्व अन्य में निविष्ट होता है, जिसकी प्रेरणा से सूर्य उदित होता है एवं निरन्तर जल बहता है।

मन्त्रमखर्व सुधितं सुपेशसं दधात यज्ञियेष्वा।
पूर्वीश्चन प्रसितयस्तरन्ति तं य इन्द्रे कर्मणा भुवत् ॥

ऋग्वेद ७।३२।१३

यज्ञ-भावनासे भावित सदाचारीको भली प्रकारसे विवेचित, सुन्दर आकृतिसे युक्त, उच्च विचार दो। जो इन्द्रके निमित्त कर्म करता है, उसे पूर्वजन्म के बन्धन छोड़ देते हैं।

त्रिभिः पवित्रैरपुपोद्ध्यर्क हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन्।
वर्षिष्ठं रत्नमकृत स्वधाभिरादिद् द्यावापृथिवी पर्यपश्यत् ॥

ऋग्वेद ३।२६।८

मनुष्य या साधक हृदय से ज्ञान और ज्योति को भली प्रकार जानते हुए तीन पवित्र उपायों - यज्ञ, दान और तप अथवा श्रवण, मनन और निदिध्यासन से आत्मा को पवित्र करता है। अपने सामर्थ्य से सर्वश्रेष्ठ रत्न 'ब्रह्मज्ञान'को प्राप्त कर लेता है और तब वह इस संसारको तुच्छ दृष्टिसे देखता है।

नकिर्देवा मिनीमसि नकिरा योपयामसि मन्त्रश्रुत्यं चरामसि।
पक्षेभिरपिकक्षेभिरत्राभि सं रभामहे ॥

ऋग्वेद १०।१३४।७

हे देवो! न तो हम हिंसा करते हैं, न विद्वेष उत्पन्न करते हैं; अपितु वेद के अनुसार आचरण करते हैं। तिनके-जैसे तुच्छ प्राणियों के साथ भी मिलकर कार्य करते हैं।

यस्तित्याज सचिवदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति।
यदीं शृणोत्यलकं शृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम्॥

ऋग्वेद १०।७१।६

जो मनुष्य सत्य-ज्ञान का उपदेश देने वाले मित्र का परित्याग कर देता है, उसके वचनों को कोई नहीं सुनता। वह जो कुछ सुनता है, मिथ्या ही सुनता है। वह सत्कार्य के मार्गको नहीं जानता।

से इड्रोजो यो गृहवे ददात्यन्नकामाय चरते कृशाय।
अरमस्मै भवति यामहूता उतापरीषु कृणुते सखायम् ॥

ऋग्वेद १०।११७।३

अन्नकी कामना करनेवाले निर्धन याचक को जो अन्न देता है, वही वास्तव में भोजन करता है। ऐसे व्यक्ति के पास पर्याप्त अन्न रहता है और समय पड़ने पर बुलाने से, उसकी सहायता के लिये तत्पर अनेक मित्र उपस्थित हो जाते हैं।

पृणीयादिन्नाधमानाय तव्यान्द्राधीयां समनु। पश्येत पन्थाम् ।

ऋग्वेद १०।११७।५

मनुष्य अपने सम्मुख जीवनका दीर्घ पथ देखे और याचना करनेवाले को दान देकर सुखी करे।

ये अग्ने नेरयन्ति ते वृद्धा उग्रस्य शवसः।
अप द्वेषो अप ह्वरो ऽन्यव्रतस्य सश्चिरे॥

ऋग्वेद ५।२०।२

वास्तव में 'वृद्ध' तो वे हैं, जो विचलित नहीं होते और अति प्रबल नास्तिक की द्वेषभावना को एवं उसकी कुटिलताको दूर करते हैं।

श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हुयते हविः।
श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि ॥

ऋग्वेद १० । १५१।१

श्रद्धा से अग्नि को प्रज्वलित किया जाता है, श्रद्धा से ही हवनमें आहुति दी जाती है; हम सब प्रशंसापूर्ण वचनों से श्रद्धा को श्रेष्ठ ऐश्वर्य मानते हैं।

स नः पितेव सूनवे ऽग्ने सुपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये॥

ऋग्वेद १।१।९

जिस प्रकार पिता अपने पुत्रके कल्याणको कामनासे उसे सरलतासे प्राप्त होता है, उसी प्रकार हे अग्नि! तुम हमें सुखदायक उपायों से प्राप्त हो। हमारा कल्याण करनेके लिये हमारा साथ दो।

सुक्षेत्रिया सुगातुया वसूया च यजामहे। अप नः शोशुचदघम्॥

ऋग्वेद १। ९७। २

सुशोभन क्षेत्र के लिये, सन्मार्ग के लिये और ऐश्वर्य को प्राप्त करनेके लिये हम आपका यजन करते हैं। हमारा पाप विनष्ट हो।

स नः सिन्धुमिव नावयाति पर्षा स्वस्तये। अप शोशुचदधम्॥

ऋग्वेद १॥ ९७।८

जैसे सागर को नौका के द्वारा पार किया जाता है, वैसे ही वह परमेश्वर हमारा कल्याण के लिये हमें संसार-सागर से पार ले जाय। हमारा पाप विनष्ट हो।

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥

ऋग्वेद ५।५१।१

हम अपना कल्याण करने के लिये वायु की उपासना करते हैं, जगत के स्वामी सोम की स्तुति करते हैं और अपने कल्याण के लिये हम सभी गणों सहित बृहस्पति की स्तुति करते हैं। आदित्य भी हमारा कल्याण करनेवाले हों।

अपि पन्थामगन्महि स्वस्तिगामनेहसम्। येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु॥

ऋग्वेद ६।५१।१६

हम उस कल्याणकारी और निष्पाप मार्ग का अनुसरण करें, जिससे मनुष्य सभी द्वेष-भावनाओं का परित्याग कर देता है और सम्पत्ति को प्राप्त करता हैं।

शं नो अग्निज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥

ऋग्वेद ७।३५।४

ज्योति ही जिसका मुख है, वह अग्नि हमारे लिये कल्याणकारक हो; मित्र, वरुण और अश्विनीकुमार हमारे लिये कल्याणप्रद हों; पुण्यशाली व्यक्तियों के कर्म हमारे लिये सुख प्रदान करनेवाले हों तथा वायु भी हमें शान्ति प्रदान करने के लिये प्रवाहित हो।

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु ।
शं ने ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥

ऋग्वेद ७।३५।५

द्युलोक और पृथ्वी हमारे लिये सुखकारक हों, अन्तरिक्ष हमारी दृष्टि के लिये कल्याणप्रद हो, औषधियाँ एवं वृक्ष हमारे लिये कल्याणकारक हों तथा लोकपति इन्द्र भी हमें शान्ति प्रदान करें।

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥

ऋग्वेद ७। ३५। ८

विस्तृत तेजसे युक्त सूर्य हम सबका कल्याण करता हुआ उदित हो। चारों दिशाएँ हमारा कल्याण करनेवाली हों। अटल पर्वत हम सबके लिये कल्याणकारक हों। नदियाँ हमारा हित करनेवाली हों और उनका जल भी हमारे लिये कल्याणप्रद हो।

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वः ।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ।।

ऋग्वेद ७ । ३५।९

अदिति हमारे लिये कल्याणप्रद हों, मरुद्गण हमारा कल्याण करनेवाले हों। विष्णु और पुष्टिदायक देव हमारा कल्याण करें तथा जल एवं वायु भी हमारे लिये शान्ति प्रदान करनेवाले हों।

शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तुषसो विभातीः।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥

ऋग्वेद ७।३५।१०

रक्षा करने वाले सविता हमारा कल्याण करें, सुशोभित होती हुई उषादेवी हमें सुख प्रदान करें, वृष्टि करने वाले पर्जन्यदेव हमारी प्रजाओं के लिये कल्याणकारक हों और क्षेत्रपति शम्भु भी हम सबको शान्ति प्रदान करें।

शं नो देवा विश्वेदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु।

ऋग्वेद ७।३५।११

सभी देवता हमारा कल्याण करनेवाले हों, बुद्धि प्रदान करनेवाली देवी सरस्वती भी हम सबका कल्याण करें।

त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ। अधा सुम्नमीमहे ।।

ऋग्वेद ८।९८।११

हे आश्रयदाता ! तुम ही हमारे पिता हो। हे शतक्रतु ! तुम हमारी माता हो। हम तुमसे कल्याणकी कामना करते हैं।

इमे जीवा वि मृतैराववृत्रन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य।
प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ।।

ऋग्वेद १०।१८।३

ये जीव मृत व्यक्तियों से घिरे हुए नहीं हैं, इसीलिये आज हमारा कल्याण करने वाला देवयज्ञ सम्पूर्ण हुआ। नृत्य करनेके लिये, आनन्द मनाने के लिये दीर्घ आयु को और अधिक दीर्घ करते हुए उन्नति-पथ पर अग्रसर हों।

भद्रं नो अपि वातय मनो दक्षमुत क्रतुम्।

ऋग्वेद १०।२५।१

हे परमेश्वर ! हमें कल्याणकारक मन, कल्याण करने का सामर्थ्य और कल्याणकारक कार्य करने की प्रेरणा दें।

यजुर्वेदीय मन्त्रसुधा

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि॥

यजुर्वेद १।५

हे व्रतरक्षक अग्नि ! मैं सत्यव्रती होना चाहता हूँ। मैं इस व्रतको कर सकें। मेरा व्रत सिद्ध हो। मैं असत्यको त्याग करके सत्यको स्वीकार करता हूँ।

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाऽऽप्नोति दक्षिणाम्। दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

यजुर्वेद १९। ३०

व्रत से दीक्षा की प्राप्ति होती है और दीक्षा से दाक्षिण्य की, दाक्षिण्य से श्रद्धा उपलब्ध होती है और श्रद्धा से सत्य की उपलब्धि होती हैं।

अग्ने नय सुपथा राये अस्माविश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम॥

यजुर्वेद ५। ३६

हे अग्नि! हमें आत्मोत्कर्ष के लिये सन्मार्ग में प्रवृत्त कीजिये। आप हमारे सभी कर्मो को जानते हैं। कुटिलतापूर्ण पापाचरण से हमारी रक्षा कीजिये। हम आपको बार-बार प्रणाम करते हैं।

दृते दृछह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥

यजुर्वेद ३६।१८

मेरी दृष्टि को दृढ कीजिये; सभी प्राणी मुझे मित्र की दृष्टि से देखें; मैं भी सभी प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखें; हम परस्पर एक-दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें ।

सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु ।

मा विद्विषावहै। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

कृष्ण यजुर्वेदीय शान्तिपाठ

हम दोनों साथ-साथ रक्षा करें, एक साथ मिलकर पालन-पोषण करें, साथ-ही-साथ शक्ति प्राप्त करें। हमारा अध्ययन तेजसे परिपूर्ण हो । हम कभी परस्पर विद्वेष न करें। हे ईश्वर ! हमारे आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक-त्रिविध तापों की निवृत्ति हो ।

स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथाः। अप नः शोशुचदघम् ॥

यजुर्वेद ३५। २१

हे पृथ्वी! सुखपूर्वक बैठनेयोग्य होकर तुम हमारे लिये शुभ हो, हमें कल्याण प्रदान करो। हमारा पाप विनष्ट हो जाय।

यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पति तद्दधातु । शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः ॥

यजुर्वेद ३६। २

जो मेरे चक्षु और हृदय का दोष हो अथवा जो मेरे मन की बड़ी त्रुटि हो, बृहस्पति उसको दूर करें। जो इस विश्व का स्वामी है, वह हमारे लिये कल्याणकारक हो।

भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

यजुर्वेद ३६।३

सत्, चित्, आनन्दस्वरूप और जगत के सृष्टा ईश्वरके सर्वोत्कृष्ट तेजका हम ध्यान करते हैं। वे हमारी बुद्धि को शुभ प्रेरणा दें।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः ।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सो मा शान्तिरेधि।।

यजुर्वेद ३६।१७

द्युलोक शान्त हो; अन्तरिक्ष शान्त हो, पृथ्वी शान्त हो, जल शान्त हो, औषधियाँ शान्त हों, वनस्पतियाँ शान्त हों, समस्त देवता शान्त हों, ब्रह्म शान्त हों, सब कुछ शान्त हो, शान्त-ही-शान्त हो और मेरी वह शान्ति निरन्तर बनी रहे।

यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु।
शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः ।

यजुर्वेद ३६ । २२

जहाँ-जहाँसे आवश्यक हो, वहाँ-वहाँसे ही हमें अभ्य प्रदान करो। हमारी प्रजाके लिये कल्याणकारक हो और हमारे पशुओंको भी अभय प्रदान करो।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम
शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥

यजुर्वेद ३६।२४

ज्ञानी पुरुषों का कल्याण करने वाला, तेजस्वी ज्ञान-चक्षु-रूपी सूर्य सामने उदित हो रहा है, उसकी शक्ति से हम सौ वर्ष तक देखें, सौ वर्ष का जीवन जियें, सौ वर्ष तक सुनते रहें, सौ वर्ष तक बोलें, सौ वर्ष तक दैन्यरहित होकर रहें और सौ वर्ष से भी अधिक जियें ।

सामवेदीय मन्त्रसुधा

शं नो देवीरभिष्टये शं नो भवन्तु पीतये।
योरभि स्रवन्तु नः ॥

सामवेद १।३।१३

दिव्य-गुण-युक्त जल अभीष्टकी प्राप्ति और पीनेके लिये कल्याण करनेवाला हो तथा सभी ओरसे हमारा मङ्गल करनेवाला हो। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।

स्वस्ति नस्तार्क्ष्य अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

सामवेद २९।३।९

विस्तृत यशवाले इन्द्र हमारा कल्याण करें, सर्वज्ञ पूषा हम सबके लिये कल्याणकारक हों, अनिष्ट का निवारण करने वाले गरुड हम सबका कल्याण करें और बृहस्पति भी हम सबके लिये कल्याणप्रद हों।

शं चन्द्रमा अप्स्वाऽन्तरा सुपर्णो धावते दिवि।
न वो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युत वित्तं मे अस्य रोदसी।

सामवेद पूर्वा० २।३१।९

अन्तरिक्षवासी चन्द्रमा अपनी श्रेष्ठ किरणों सहित आकाश में गतिशील है। हे विद्युतु रूप स्वर्णमयी सूर्य की रश्मियों ! आपके चरणरूपी अग्रभाग को हमारी इन्द्रियाँ पकड़ने में समर्थ नहीं हैं। हे द्यावापृथिवि ! मेरी स्तुतियों को स्वीकार करें। रात्रि में सूर्य का प्रकाश आकाश में संचरित रहता हैं; किंतु हमारी इन्द्रियाँ उसे अनुभव नहीं कर पातीं । चन्द्रमा के माध्यम से ही प्रकाश मिलता है।

अथर्ववेदीय मन्त्रसुधा ।

जिह्वाया अग्रे मधु मे जिह्वामूले मधूलकम्।
ममेदह क्रतावसो मम चित्तमुपायसि ।।

अथर्ववेद १।३४।२

मेरी जिह्वा के अग्रभाग में माधुर्य हो। मेरी जिह्वा के मूल में मधुरता हो। मेरे कर्म में माधुर्य का निवास हो और हे माधुर्य ! मेरे हृदय तक पहुँचो ।

मधुमन्मे निक्रमणं मधुमन्मे परायणम्।
वाचा वदामि मधुमद् भूयास मधुसंदृशः॥

अथर्ववेद १।३४।३

मेरा जाना माधुर्यमय हो। मेरा आना माधुर्यमय हो। मैं मधुर वाणी बोलूं और मैं मधुर आकृतिवाला हो जाऊँ।

प्राणो है सत्यवादिनमुत्तमे लोक आ दधत् ।।

अथर्ववेद ११।४।११

प्राण सत्य बोलनेवाले को श्रेष्ठ लोक में प्रतिष्ठित करता है।

सुश्रुतौ कण भद्रश्रुतौ कण भद्रं श्लोकं श्रूयासम् ॥

अथर्ववेद १६।२।४

शुभ और शिव-वचन सुननेवाले कानों से युक्त मैं केवल कल्याणकारी वचनों को ही सुनूँ।

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः।
अन्यो अन्यस्मै वलगु वदन्त एत सधीचीनान्वः संमनसस्कृणोमि ॥

अथर्ववेद ३।३०।५

वृद्धों का सम्मान करने वाले, विचारशील, एकमत वाले कार्यसिद्धि में संलग्न, समान धुर वाले होकर विचरण करते हुए तुम विलग मत होओ। परस्पर मधुर सम्भाषण करते हुए आओ। मैं तुम्हें एक गति और एक मत वाला करता हूँ।

सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोम्येकश्नुष्टीन्संवननेन सर्वान्।
देवा इवामृतं रक्षमाणाः सायंप्रातः सौमनसो वो अस्तु॥

अथर्ववेद ३।३०।७

समानगति और उत्तम मन से युक्त आप सबको मैं उत्तम भाव से समान खान-पानवाला करता हूँ। अमृत की रक्षा करने वाले देवों के समान आपका प्रात: और सांय कल्याण हो।

शिवा भव पुरुषेभ्यो गोभ्यो अश्वेभ्यः शिवा।
शिवास्मै सर्वस्मै क्षेत्राय शिवा ने इहैधि॥

अथर्ववेद ३।२८।३

हे नववधू ! पुरुषों के लिये, गायों के लिये और अश्वों के लिये कल्याणकारी हो। सब स्थानों के लिये कल्याण करनेवाली हो तथा हमारे लिये भी कल्याणमय होती हुई यहाँ आओ।

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचे वदतु शन्तिवाम्॥

अथर्ववेद ३।३०।२

पुत्र पिताके अनुकूल उद्देश्यवाला हो। पत्नी पति के प्रति मधुर और शान्ति प्रदान करनेवाली वाणी बोले।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचे वदत भद्रया।

अथर्ववेद ३।३०।३

भाई-भाईके साथ द्वेष न करे। बहन-बहनसे विद्वेष न करे। समान गति और समान नियमवाले होकर कल्याणमयी वाणी बोलो।

यथा सिन्धुर्नदीनां साम्राज्यं सुषुवे वृषा।
एवा त्वं सम्राज्ञेयेधि पत्युरस्तं परेत्य॥

अथर्ववेद १४।१।४३

जिस प्रकार समर्थ सागर ने नदियों का साम्राज्य उत्पन्न किया है, उसी प्रकार पति के घर जाकर तुम भी सम्राज्ञी बनो।

सम्राज्ञ्येधि श्वशुरेषु सम्राज्ञ्युत देवृषु।
ननान्दुः सम्राज्येधि सम्राज्ञ्युत श्वश्वाः ॥

अथर्ववेद १४।१।४४

ससुर की सम्राज्ञी बनो, देवरों के मध्य भी सम्राज्ञी बनकर रहो, ननद और सास की भी सम्राज्ञी बनो।

सर्वो वा एषोऽजग्धपाप्मा यस्यान्नं नाश्नन्ति

अथर्ववेद ९।६।२६

जिसके अन्नमें अन्य व्यक्ति भाग नहीं लेते, वह सब पापों से मुक्त नहीं होता।

हिरण्यगयं मणिः श्रद्धां यज्ञं महो दधत्। गृहे वसतु नोऽतिथिः ॥

अथर्ववेद १०।६।४

स्वर्ण की माला पहननेवाला, मणिस्वरूप यह अतिथि श्रद्धा, यज्ञ और महनीयता को धारण करता हुआ हमारे घर में निवास करे।

तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्यो राज्ञोऽतिथिगृहानागच्छेत् ॥ श्रेयांसमेनमात्मनो मानयेत् ॥

अथर्ववेद १५।१०।१-२

ज्ञानी और व्रतशील अतिथि जिस राजा के घर आ जाय, उसे इसको अपना कल्याण समझना चाहिये ।

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति ।
देवांश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह ।।

अथर्ववेद ४।२१।३

मनुष्य जिन वस्तुओं से देवताओं के हेतु यज्ञ करता है अथवा जिन पदार्थों को दान करता है, वह उनसे संयुक्त ही हो जाता है; क्योंकि न तो वे पदार्थ नष्ट होते हैं, न ही उन्हें चोर चुरा सकता है और न ही कोई शत्रु उन्हें बलपूर्वक छीन सकता है।

स्वस्ति मात्र उत पित्रे नो अस्तु स्वस्ति गोभ्यो जगते पुरुषेभ्यः ।
विश्वं सुभूतं सुविदत्रं नो अस्तु ज्योगेव दृशेम सूर्यम्॥

अथर्ववेद १।३१।४

हमारे माता-पिताका कल्याण हो। गायों, सम्पूर्ण संसार और सभी मनुष्योंका कल्याण हो। सभी कुछ सुदृढ़ सत्ता, शुभ ज्ञानसे युक्त हो तथा हम चिरन्तन कालतक सूर्यको देखें।

परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वा कामये वृक्षां वनानि सं चर गृहेषु गोषु मे मनः ॥

अथर्ववेद ६।४५।१

हे मेरे मन के पाप-समूह ! दूर हो जाओ। अप्रशस्त की कामना क्यों करते हो? दूर हटो, मैं तुम्हारी कामना नहीं करता। वृक्षों तथा वनों के साथ रहो, मेरा मन घर और गायों में लगे।

इयं या परमेष्ठिनी वाग्देवी ब्रह्मसंशिता।
ययैव ससृजे घोरं तयैव शान्तिरस्तु नः ॥

अथर्ववेद १९।९।३

ब्रह्माद्वारा परिष्कृत यह परमेष्ठी को वाणीरूपी सरस्वती देवी, जिसके द्वारा भयंकर कार्य किये जाते हैं, वहीं हमें शान्ति प्रदान करनेवाली हो।

इदं यत् परमेष्ठिनं मनो वां ब्रह्मसंशितम्।
येनैव ससृजे घोरं तेनैव शान्तिरस्तु नः ।।

अथर्ववेद १९।९।४

परमेष्ठी ब्रह्मा द्वारा तीक्ष्ण किया गया यह आपका मन, जिसके द्वारा घोर पाप किये जाते हैं, वही हमें शान्ति प्रदान करें ।

इमानि यानि पञ्चेन्द्रियाणि मनःषष्ठानि मे हृदि ब्रह्मणा संशितानि।
यैरेव ससृजे घोरं तैरेव शान्तिरस्तु नः ।।

अथर्ववेद १९।९।५

ब्रह्मा के द्वारा सुसंस्कृत ये जो पाँच इन्द्रियाँ और छठा मन, जिनके द्वारा घोर कर्म किये जाते हैं, उन्हीं के द्वारा हमें शान्ति मिले।

शं नो मित्रः शं वरुणः शं विवस्वांछमन्तकः।
उत्पाताः पार्थिवान्तरिक्षाः शं नो दिविचरा ग्रहाः ॥

अथर्ववेद १९।९।७

मित्र हमारा कल्याण करे; वरुण, सूर्य और यम हमारा कल्याण करें; पृथ्वी एवं आकाश में होनेवाले अनिष्ट हमें सुख देनेवाले हों तथा स्वर्ग में विचरण करनेवाले ग्रह भी हमारे लिये शान्ति प्रदान करनेवाले हों।

पश्येम शरदः शतम् ॥
जीवेम शरदः शतम् ॥
बुध्येम शरदः शतम् ॥
रोहेम शरदः शतम् ॥
पूषेम शरदः शतम् ॥
भवेम शरदः शतम् ॥
भूयेम शरदः शतम्॥
भूयसीः शरदः शतात्॥

अथर्ववेद १९।६७।१-८

हम सौ वर्ष तक देखते रहें। सौ वर्ष तक जियें, सौ वर्ष तक ज्ञान प्राप्त करते रहें, सौ वर्ष तक उन्नति करते रहें, सौं वर्ष तक हृष्ट-पुष्ट रहें, सौ वर्ष तक शोभा प्राप्त करते रहें और सौ वर्ष से भी अधिक आयु का जीवन जियें।

वैदिक दीक्षान्त

कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीयोपनिषद्

उपदेश वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति।

वेद विद्या पढ़ा देनेके पश्चात् आचार्य शिष्यको उपदेश करता है, दीक्षान्त-भाषण देता हुआ कहता है

सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः ।
आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः ।
सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्।
कुशलान्न प्रमदितव्यम्। भूत्यै न प्रमदितव्यम्।
स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्।
देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्।

तुम सत्य बोलना। धर्माचरण करना। स्वाध्याय से प्रमाद न करना। आचार्यको जो प्रिय हो, उसे दक्षिणा रूप में देकर गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश करना और संतति के सूत्र को न तोड़ना। सत्य बोलने से प्रमाद न करना। धर्मपालन में प्रमाद न करना। जिससे तुम्हारा कल्याण होता हो, उसमें प्रमाद न करना। अपना वैभव बढ़ाने में प्रमाद न करना। स्वाध्याय और प्रवचन द्वारा अपने ज्ञान को बढ़ाते रहना, देवों और पितरों के प्रति तुम्हारा जो कर्तव्य है, उसे सदा ध्यानमें रखना।

मातृदेवो भव। पितृदेवो भव । आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव।
यान्यनवद्यानि कर्माणि। तानि सेवितव्यानि। नो इतराणि।
यान्यस्माकसुचरितानि। तानि त्वयोपास्यानि। नो इतराणि।
ये के चास्मच्छेयासो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वसितव्यम्।
श्रद्धया देयम् । अश्रद्धयादेयम्। श्रिया देयम् ।
ह्रिया देयम् । भिया देयम्। संविदा देयम् ।।

माता को, पिता को, आचार्य को और अतिथि को देवस्वरूप मानना, उनके प्रति पूज्य-बुद्धि रखना। हमारे जो कर्म अनिन्दित हैं, उन्हीं का स्मरण रखना, दूसरों का नहीं। जो हमारे सदाचार हैं, उन्हींकी उपासना करना, दूसरों की नहीं। हमसे श्रेष्ठ विद्वान् जहाँ बैठे हों, उनके प्रवचनको ध्यानसे सुनना, उनका यथेष्ट आदर करना। दूसरों की जो भी सहायता करना, वह श्रद्धापूर्वक करना, किसी को वस्तु अश्रद्धा से न देना। प्रसन्नता के साथ देना, नम्रता पूर्वक देना, भय से भी देना तो प्रेमपूर्वक देना।

अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्।
ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः । युक्ता आयुक्ताः।
अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्र वर्तेरन् । तथा तत्र वर्तेथाः।

ऐसा करते हुए भी यदि तुम्हें कर्तव्य और अकर्तव्य में संशय पैदा हो जाय, यह समझ में न आये कि धर्माचार क्या हैं तो विचारवान् तपस्वी, कर्तव्यपरायण, शान्त और सरस स्वभाव वाले जो विद्वान् हों, उनके पास जाकर अपना समाधान कर लेना और जैसा वे बर्ताव करते हों, वैसा बर्ताव करना।

अथाभ्याख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः । युक्ता आयुक्ताः।
अलूक्षा धर्मकामाः स्युः । यथा ते तेषु वर्तेरन्। तथा तेषु वर्तेथाः।

किसी दोष से लांछित मनुष्यों के साथ बर्ताव करने में जो वहाँ उत्तम विचारवाले, परामर्श देने में कुशल, सब प्रकार से यथायोग्य सत्कर्म और सदाचार में लगे हुए, रूखे पनसे रहित धर्म के अभिलाषी विद्वान् हों, वे जिस प्रकार उनके साथ बर्ताव करें, उनके साथ तुम भी वैसा ही व्यवहार करना।

एष आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत् ।
एतदनुशासनम्। एवमुपासितव्यम् । एवमु चैतदुपास्यम्।

यही आदेश हैं। यहीं उपदेश है। यही वेद और उपनिषद का सार है। यही हमारी शिक्षा है। इसके अनुसार ही अपने जीवनमें आचरण करना।

संकलनकर्ता:

श्री मनीष त्यागी

संस्थापक एवं अध्यक्ष

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय:।।